International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 23-12-2020; Accepted: 11-01-2021; Published: 12-02-2021
www.hindijournal.com
Volume 7; Issue 1; 2021; Page No. 53-55

राजेन्द्र यादवः एवं मनोविज्ञान

डॉ. आशुतोष कुमार द्विवेदी[1], अंजना सिंह[2]
[1] प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, शा. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा, मध्य प्रदेश, भारत।
[2] शोधार्थी, हिन्दी, एं.पी.एस.यू. रीवा, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
साहित्य के क्षेत्र में राजेन्द्र यादव महत्वपूर्ण रचनाकार के रुप में जाने जाते हैं। लेखन की दिशा में तो उनका अपना अलग मुकाम है ही बल्कि सामान्यतः लोक–व्यवहार के लिए भी उनकी प्रतिभा का बहुत लोहा माना जाता है। मानसिक स्थिति का जिस कुशलता से उन्होंने अपने साहित्य में वर्णन किया है, उसका प्रभाव उनकी रचनाओं में स्पष्टतः परिलक्षित होता है। वे बिल्कुल साफ–सुथरी भाषा का प्रयोग करने तथा भावनाओं को खुलकर लिखने में विश्वास रखने वाले लेखकों में आते हैं। जिस तथ्य को व्यक्ति तोड़ मरोड़कर कहता है उस बात को सीधे शब्दों में कहने का हुनर उन्हीं जैसे कुशल कलमकार के पास था–''हर व्यक्ति की जिन्दगी में, विशेषकर रचनाकार की जिन्दगी में, सैक्स का बड़ा हांथ होता है,कई मनोविश्लेषक तो यह मानते हैं कि रचनात्मकता अभिव्यक्ति के स्तर पर जैसे कला के साथ जुड़ी है, तो उधर स्त्रोत के रुप में सैक्स के साथ भी जुड़ी हुई है गगगग रचना कभी सैल्फ–प्रोजेक्शन से आती है तो कभी–कभी गिल्ट से आती है गगगगग लेखन में अवचेतन का भी महत्वपूर्ण हाथ होता है।''[1] उनकी यही बेबाक वाणी सिद्ध करती है कि लेखक की रचनात्मकता को मनोविश्लेषण के परिप्रेक्ष्य में देखने वाले तथा अपने रचना संसार में मनोविज्ञान से सम्बन्धित शब्दावली का एवं सिद्धान्तों का प्रयोग करने वाले, आन्तरिक संवादों में मातहत् पात्रों की जिज्ञासा को भलिभाति प्रस्तुत करने में राजेन्द्र यादव का तथाकथित सामाजिक रचनाकारों में प्रथमतः नाम लिया जाता है।

मूल शब्दः राजेन्द्र यादव, मनोविज्ञान, सामाजिक परिवर्तन, वर्ग–उन्मूलन, शोषित।

प्रस्तावना
एक सफल रचनाकार के रुप में यादव जी का नाम प्रतिबद्ध एवम् मनोविश्लेषक कथाकार की श्रेणी में प्रमुखरुप से लिया जाता है क्योंकि शोषित वर्ग के प्रति सहानूभूति व प्रतिबद्धता की अवधारणा अमूर्त नही होती है, अभिजात्य वर्ग की तरह । बल्कि विचारधारा अपनी जटिलता की समग्रता में एक सक्रिय दर्शन चिन्तन व कर्म का माध्यम होती है। रेमण्ड विलियम्स का विचार इस दिशा में बिल्कुल सटीक है–''विचारधारा अगर केवल एक अमूर्त धारणा मात्र होती और हमारे सामाजिक राजनैतिक और सांस्कृतिक विचार, मान्यताएँ और आदतें एक खास किस्म की साजिश का परिणाम होती अथवा फिर एक ऐसे अभ्यास से व्युत्पन्न होता तो समाज का परिवर्तन या संचालन काफी सुगम कार्य होता लेकिन अब तक के व्यावहारिक जीवन में यह निश्चित ही सुगम कार्य नहीं है। सही सर्वहारा वर्ग की मार्क्सवादी विचारधारा के प्रतिबद्ध रचनाकार वर्ग शत्रुओं की ओर इंगित ही नहीं करता बल्कि 'वर्ग–उन्मूलन' की अवधारणा भी रचता हैं।''[2] विशेषतः साहित्य का आधार सामाजिक मनुष्य एवं सामाजिक परिवेश होता है जबकि मनोविज्ञान का केन्द्र व्यक्ति विशेष के कार्य–कलाप और व्यक्ति सम्बन्धी विवेचन होता है। अतः सामाजिक एवं व्यक्ति का आचरण सम्बन्धी तालमेल और तथा सृजनात्मक द्वन्द्व ही मनोविज्ञान के अध्ययन का केन्द्र बिन्दू होता हैं। जिस प्रकार ग्लेशियर या आइंसवर्ग का एक का एक तिहाई भाग ही हमें दृष्टिगोचर होता है और अभिव्यक्त भाग उसके कुल व्यक्तित्व एवम् जीवन परिवेश का आंशिक अंश ही होता है जिसका अधिकांश भाग अवचेतन और अनभिव्यक्त में प्रक्षित रहता है। एक आधार पर माना जाता है कि साहित्य या कलाकृति का आस्वादन सामाजिक , सुसंकृत या रसिक व्यक्ति ही कर पाता है जो इसके प्रशिक्षण , अध्ययन, मनन और विवेचन की लम्बी प्रक्रिया का अभ्यस्त हो। मनोविज्ञान अपने विश्लेषण की तहों को गम्भीरतापूर्वक ही आरोपित कर सकता है। यह चेतन एवं अवचेतन, प्रकट और अप्रकट, अभिव्यक्त अनभिव्यक्त, गोपन रहस्यों का माइक्रोस्कोपी अध्ययन हैं। यह विरेचन–चिकित्सा न हो कर रचनाकार के सृष्टा बनने और कलाकृतियों के सृष्टा होने, रचे जाने का आघोषित तिलिस्मी रहस्य भी है। जिसका उपयोग काई सुधी विद्वान या विरल अध्येता ही कर सकता है।

सामाजिक आचरण में मनुष्य अपने आपको सभ्य सुसंस्कृत, नैतिक और गरिमामय रुप में प्रस्तुत करता है, किन्तु वह अपने आन्तरिक जीवन, कल्पना और स्वप्न की स्थिति में आदिम आवेगों और विशिष्ट प्रवृत्तियों के अनुकूल आचरण करता है। पायः अपनी विकृतियों वासनाओं और मनोगत क्रीड़ाओं को छिपाना चाहेगा। यह सामान्य लोक व्यवहार और मनोविज्ञान की अवधारणा है। राजेन्द्र यादव के उपन्यास मंत्रविद्ध, कुलटा, दरअसल हिन्दी साहित्य में इन्ही मनोविश्लेषणात्मक संदर्भों को प्रस्तुत करते हैं। कहना न होगा कि कलाकृति, व्यक्ति लेखक की व्यक्त और अव्यक्त, लक्षित तथा अलक्षित, स्वप्न और दिवास्वप्न इच्छाओं की रुपक भर होती हैं। इस संदर्भ में स्वयं राजेन्द्र यादव का मत है कि–''व्यक्ति पर तभी शायद लिख सकूँगा, जब अपने से हटकर यह मान लूँ कि वह किसी प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति है एक ऐसी बात है, जो मेरी ही नहीं, सभी की हैं। अपनी व्यक्तिगत सीमाओं और कमजोरियों से हट पाने के लिए मैंने लेखन को लिया है, उसे अपना शौचालय बना डालने के लिए नहीं..... मन्दिर भी नहीं, बस, कहीं इन दोनों के बीच की जगह।''[3] मनोविज्ञान 'मन' का विज्ञान है। यह मानव मन की विभिन्न दशाओं का अध्ययन प्रस्तुत करता है। प्रारम्भ में मनोविज्ञान को आत्मा, मन तथा चेतना के विज्ञान के रुप में देखा गया, परन्तु वस्तुगत स्वरुप के अभाव में वे विचारधाराएँ ज्यादा नहीं चल पायीं। वर्तमान भारत में ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जो मनोविज्ञान से प्रभावित न हुआ हो। मानव जीवन से प्रत्येक समस्या का अध्ययन और समाधान मनोविज्ञान करता है। मनोविज्ञान की परिभाषा कुछ इस तरह से है–''मनोविज्ञान मन का विज्ञान है अर्थात् मन का विशिष्ट एवम्

व्यवस्थित ज्ञान। विज्ञान की रीति–नीति और दृष्टिकोण को स्वीकार करने से 'मन' का ज्ञान 'व्यवस्थित' हो गया है। आज इसका क्षेत्र काफी विस्तृत और समृद्ध है। इससे जुड़े अनेकों विद्वानों ने इसे अपने ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया है। ग्रीक दार्शनिकों ने मन को 'अंतर्ज्योति' कहा। प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो ने मन और विचार को एक बताया तो अरस्तु ने इसे 'आत्मा का विज्ञान' माना। उन्होंने आत्मा में ज्ञान के अतिरिक्त अन्य कई गुण और शक्तियों का प्रस्थान किया। इससे यह 'शक्तियों का विज्ञान' कहलाया।''[4] मनुष्य हो या कलाकार वह अपने आदिम आवेगों से संचालित और प्रभावित रहता है। यह आदिम अनुभूति कलाकार की सर्जनशीलता का स्त्रोत होती है। चूंकि उसका वस्तुगत आंकलन संभव नहीं है, इसलिए उसे रुप देने के लिए पौराणिक बिम्ब–विधान की आवश्यकता होती है। अपने आप में वह कोई शब्द या बिम्ब नहीं प्रस्तुत करती क्योंकि उसका रुप धूमिल होता है। वह एक प्रकार की गहरी पूर्व सूचना है जो अभिव्यक्ति पाना चाहती है। उसकी स्थिति उस वात्याचक्र के समान है जो पहुँच की सीमा में पड़ने वाली प्रत्येक चीज को पकड़ लेती है और उसे ऊपर उठाकर दृश्य आकार धारण कर लेती है। उस दृश्य में जो दिखायी पड़ता है, वह सामुहिक अचेतन है। राजेन्द्र यादव ने परम्परा के जड़त्व से हटकर बीच की पीढ़ी के मनोदभूत संम्प्रेषित स्थिति का अवगाहन किया है। उनकी साहित्यिक विधा में यथार्थ का अन्वेषण तो है लेकिन परिवेश की आन्तरिक समस्याओं जटिलताओं एवं गूढ़तम स्थितियों की अंतः तलाश सतही है। वे स्वयं इस बात के लिए अपनी विचारधारा प्रस्तुत किया है–''मेरी सारी जिन्दगी इन अंधे कुओं से बाहर आने की प्रक्रिया रही हैं अगर कोई मुझसे पूछे कि क्या मेरी जिन्दगी का कोई एक सूत्र रहा है तो शायद मेरा ध्यान इसी प्रक्रिया की तरफ जायेगा। अपने शरीर भूगोल मन और बुद्धि की सीमाओं के पार जाने की कोशिश उन्हें अतिक्रमित कर सकने का प्रयास जो कुछ मुझे दिया गया है या मिला है उससे ऊपर उठने के उपक्रम को ही आप मेरा विकास भी कह सकते हैं। वह मैंने अनुभवों के माध्यम से किया है, सम्बन्धों के माध्यम से किया है और शायद किया है स्वध्याय के माध्यम से.....स्मृतियों में रहना स्वप्नों में जीना मुझे बेहद प्रिय है, वह न होता तो लेखक बन सकना भी संभव नहीं था।''[5] व्यक्ति के व्यक्तित्व पर उसके आन्तरिक मनोभाव का जितना प्रभाव होता है, उतना ही बाह्म परिवेश का । व्यक्तित्व विकास में व्यक्ति की अपनी आंतरिक क्रियाएँ, व्यक्तिगत स्थितियाँ तथा सामाजिक परिवेश बराबर की भूमिका निभाते हैं। मनोविश्लेषण के आधार को ग्रहण कर जैनेन्द्र, इलाचंन्द्र जोशी , भगवतीचरण वर्मा, अज्ञेय और राजकमल चौधरी ने विभिन्न स्त्री और पुरुष पात्रों के आंतरिक मनोभवों एवम् प्रवृत्ति विशेष की भावनाओं को अपने कथा साहित्य में प्रत्यय दिया है। भारतीय जन समाज में बहुसंख्यक व्यक्ति मध्यवर्ग एवम् निम्नवर्ग के है।

लेकिन मनोविश्लेषण के क्षेत्र में सामान्य और असामान्य पात्र दोनों विवेचित होते हैं। उदाहरणतः 'कुलटा' उपन्यास में मेजर तेजपाल यौन प्रतीकों के सांकेतिक विवेचन में एक टिपिकल पात्र बन जाता है जिसकी विवेचना रिप्रेशन, दमन अथवा अर्थविक्षिप्तता की स्थिति में मनोविश्लेषण की विवेचना में ही कारगर हो सकती है। रचनाकार अपनी कलाकृतियों में अपने वैयक्तिक अभावों की क्षति–पूर्ति ही नहीं करता है बल्कि वह पात्र विशेष के रचनात्मक कार्यों व उद्देश्यों में अपने आपको 'सब्लाइम' उदात्तीकरण की प्रक्रिया में ढालता है और वैयक्तिक क्षुद्रताओं से उभरने का प्रयास करता है। एक लेखक के तौर पर यादव जी ने कहा है कि–''हर पीढ़ी की अपनी भावनात्मक सम्बद्धताएँ और प्रतिबद्धताएँ होती है। एक ही समय के हवापानी की हिस्सेदारी कहीं मानसिक बनावट को भी निर्धारित करने लगती है। कहना चाहिए कि एक समय और परिवेश की उपज, हम सब एक ही काँच के बने होते हैं, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिवेश हमारे व्यक्तित्व के पहलू और कटाव भी, करीब करीब एक जैसे ही तराशते हैं। हाँ, अपनी –अपनी स्थिति, करवट, दूरियों और बूटे अलग–अलग बनाने लगते हैं।''[6] राजेन्द्र यादव की रचनाधर्मिता और कथा सृजना को अब तक प्रगतिशील एवम् अस्तित्ववादी मान मूल्यों के आधार पर अनेकों आलोचकों, शोधार्थियों ने विवेचित किया है। पर मध्यवर्गीय पात्रों की अन्तश्चेतना, हीनभावना, अग्रसारिता , उदारता, कलासृजना आदि की भावनाओं एवम् जिजीविषा को मनोविश्लेषण के आधार पर विश्लेषित करने का प्रयास नही के बराबर हुआ है। विशेषतः कहा जाये तो साहित्य जगत में चली राजेन्द्र यादव की औपन्यासिक यात्रा इंन्द्रधनुषी रंग लिए उनकी समाज सापेक्ष अवधारणा की प्रतिध्वनि रही है। आज समाज रुपी 'सारा आकाश' 'उखड़े हुए लोग', भरा पड़ा है, आधुनिक खयालात अपनाने वाली स्त्रियाँ 'कुलटा' के नाम से सम्बोधित की जाती हैं, सब को 'शह और मात' की होड़ लगी है, ऐसी भीषण स्थिति में किसी 'अनदेखे अनजान पुल' पर किसी अपने की 'एक इंच मुस्कान' ये सभी रचनाएँ समाज को एक नवीन दिशा प्रदान करने का कार्य किया है। प्रत्येक रचनाकार समसामयिक परिवेश से असन्तुष्ट रहकर कलाकृति के माध्यम से एक प्रतिसंसार रचता है।

इनके प्रत्येक उपन्यास में उनका वैचारिक माउथपीस, प्रतिनिधि प्रतिचरित्र है जो परम्परा, अंधविश्वास, पाखण्ड आदि की निर्मम आलोचना करता है। राजेन्द्र जी के अपने कथा साहित्य के अतिरिक्त वैचारिक चिन्तन संस्मरण व रिपोर्ताज साहित्य में भी हमारे बौद्धिक भटकाव को रेखांकित किया हैं। ''उपन्यास स्वरुप और संवेदना' में लेखकीय परिवेशक के बारे में कहते हैं–मुझे अफसोस है कि भारतीय कथा–साहित्य ने मूल्यों और सम्बन्धों के आधारभूत संकट को वास्तविक निगाहों से अपना केन्द्र बनाया है। दुखद बात यह है कि पुरातनता को ही वह मानवता के रुप में कन्फ्यूज करता है। नयों की आकांक्षाओं और कुण्ठाओं, आशाओं और पराजयों की कहानियाँ मुझे हिन्दी के अलावा किसी और भाषा में उतनी नहीं दिखाई देती।''[7] उपन्यास कला के आपसी पात्रों का एक अन्तर्गन्थित सम्बन्ध होता है। वे अपने आपमें एक स्वायत्त संसार के निश्चित व अनिश्चित सम्बन्धों के धनी पात्र होते है। कलाकार की मानसिक एवम् मनोविश्लेषणात्मक संकल्पना के अनुसार उनका अपना विकास क्रम होता है। यादव जी के रचना संसार में रोमांटिक अनुभूति के प्रसंग एवम् वर्णन बहुत कम है। वास्तव में कहा जाय तो उनके पात्र भी बौद्धिक अनुभूति से अधिक संचालित दिखते हैं। विभिन्न मानसिक प्रवतियों के पात्रों का पारस्परिक सम्बन्ध भी मनोविश्लेषण एवम् सामाजिक सम्बन्धों का मूलाधार है। चाहे वह 'एक इंच मुस्कान' का अमर हो या अमला। प्रसंगवंश अमला को रंजनाा द्वारा अमर को अपने प्यार में बांधे रखना लेखकीय स्वच्छन्दता में बाधक प्रतीत होता है....''वे आखिर क्यों तुम्हें सन्दूक में बन्द करके रखना चाहती हैंकृवे इस सीधी सी बात को भूल जाती हैं कि कलाकार बंधकर नहीं रहता। वह तो एक उन्मुक्त धार है जो खेतों ,जंगलों और पहाड़ों में समान निष्ठा से बहती है.वहाँ की धरती को अपनाती है, ..एक धरती उसे बांध लेगी तो वह धार कहाँ रह जाएगी ? पोखर और तालाब हो जाएगी और पानी वहीं सड़ेगा।'' इनकी इस तरह कि लेखनी से यह वर्णित होता है कि कलमकार ने मानस का मनस्तापी वर्णन करने में सफलता प्राप्त की है।साहित्य के सरताज मुंशी प्रेमचन्द के विचारानुसार–''सबसे उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हों।''[9] स्पष्टतः यह माना जा सकता है कि साहित्य में व्यक्ति से सम्बन्धित सारे मानसिक क्रिया–कलाप आते हैं, जो मनोविज्ञान के लिए अध्ययन के विषय थे और हैं। मालूम नहीं कि लोग मनोविज्ञान से क्यों एक अमूर्त भाव रचा करते हैं, बल्कि मनोविज्ञान में अहम्, इदम्, परम् अहम्, इडिपस ग्रन्थि,

सुपिरियारिटी काम्पेक्स, गेस्टाल्ट मनोविज्ञान आदि कई भावबोध व स्तर हैं। मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि –''सामाजिक विभेदीकरण अथवा विभिन्नीकरण के साथ–साथ जब तक सुबद्धता प्रबल रहती है तब तक व्यक्ति सामाजिक प्रतिबन्धों के बधीन रहता है। उनके छूटने पर वह अहंवादी, सुखवादी और उच्छृंखल हो जाता है। सभी प्रकार की आत्महत्याओं, अहंवादी, अप्रतिमानी और परार्थी में यही स्थिति होती है।''[10] मूलतः राजेनद्र यादव जितने स्पष्ट अपने लेखन को लेकर होते थे, उतनी ही भल मानसता उनके विचारों में भी साफ झलकती है। उनके अनुसार एक सच्चा कलमकार वही है जो कर्त्ता और दृष्टा के द्वन्द्व को महसूस कर सकता है। क्योंकि लेखक वह न रहे यह संभव नहीं है और मनुष्य न हो यह उसे स्वीकार्य नहीं है। एवं मनुष्य की ही इस द्वन्द्व में हार होती है। इनकी रचना 'शह और मात' की सुजाता खण्डित व्यक्तित्व का शिकार होती हैं। ''पहले अनुभव ने उसे शक्की , सावधान तथा आत्मसजग बना दिया है। भावना और चरम समर्पण के एकान्त और आत्यधिक क्षणों में जब बता दिया जाता है कि उसका उपयोग करना दूसरे उदय का लक्ष्य था तो वह अपना और उदय दोनों का सिर फोड़ देना चाहती है। ''[11] दरअसल राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में मध्यवर्गीय विसंगतियों का चित्रण पाया जाता है। पात्रों कि प्रतिक्रियाएं मनोविज्ञान कि झलकियां, यह पदर्शित करती है। सकारात्मक, नकारात्मक तथ्य दुनियां में प्राणी कि दिनचर्या को प्रभावित करते हैं। कलम कुशलता से राजेन्द्र जी को साहित्य में विशिष्ट स्थान प्राप्त है।

संदर्भ सूची

1. ओमा शर्माः राजेन्द्र यादव से बातचीत, 'कथदेश' अगस्त 2000पृ.9
2. रेमण्ड विलियम्स, आलोचना नवांक, पृ.31
3. राजेन्द्र यादाव, अपने पार पृ.9
4. मैकलुहानः फेकल्टी साइकालॉजी
5. राजेन्द्र यादव, 'वहाँ तक पहुंचने की दौड़' संग्रह, पृ.14
6. राजेन्द्र यादव, औरों के बहाने अन्वेषण का क्रम
7. राजेन्द्र यादवः उपन्यासः स्वरुप और संवेदना, पृ.225
8. राजेन्द्र यादवः: एक इंच मुस्कान, पृ, 63
9. प्रेमचन्द : कुछ विचार, पृ, 30
10. दुर्खिम : सोशोलाजी एण्ड फिलासफी , वोल्युम ,3, पृ. 166
11. राजेन्द्र यादव शह और मात,पृ 68